**ओ३म्**

**‘होली आषाढ़ी-रबी फसल व ऋतु परिवर्तन के स्वागत का पर्व’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून-248001 ।**

प्रत्येक वर्ष फाल्गुन महीने की पूर्णिमा को होली का पर्व देश भर में मनाया जाता है। पूर्णिमा के दिन लकडि़यों वा काष्ठ को इकट्ठा कर रात्रि में होली जलाई जाती है व उसके अगले दिन रंगों से होली खेली जाती है। यह पर्व कब आरम्भ हुआ इसका इतिहास में कहीं विवरण उपलब्ध नहीं है। इस कारण इस पर्व की प्राचीनता सिद्ध है। फाल्गुन मास की पूर्णिमा पर मनाये जाने के कारण इस पर्व का विशेष महत्व है। एक प्रमुख कारण यह है कि यह पर्व आषाढ़ी अथवा रबी की फसल से जुड़ा है। भारत का प्रमुख भोजनान्न गेहूं वा यव वा जौ है जो इस समय लगभग तैयार होकर नव-अन्न व शस्य के रूप में उपलब्ध होता है। सारे देश वा देशवासियों का पूरे वर्ष भर का जीवन इस अन्न व फसल पर निर्भर करता है। यदि अन्न न हो तो देश चल नहीं सकता। वायु व जल के बाद यदि संसार में सबसे उपयोगी कोई वस्तु है तो वह अन्न ही है। इसी लिए कहा गया है कि ‘**पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि अन्नं जल शुभाषितम्’ अर्थात् पृथिवी पर सबसे श्रेष्ठ तीन पदार्थ अन्न, जल व मधुर वाणी** हैं**।** प्राण-वायु का समावेश भी इनमें मान लेना चाहिये। यह विदित ही है कि हमारे कृषक अपनी फसल की गुणवत्ता-वृद्धि एवं उसे प्रचुर मात्रा में उत्पन्न करने के लिए रात-दिन न केवल कड़ा परिश्रम करते हैं अपितु उसमें अच्छे व उत्कृष्ट बीजों के प्रयोग के साथ महंगी खाद का प्रयोग भी करते हैं। अतः यदि फसल आशानुरूप तैयार होती है तो कृषकों का प्रसन्न होना स्वाभाविक ही है और यदि फसल आशारुप न हो तो कृषकों का निराश होना भी स्वाभाविक ही है। अन्य देशों में भी नई फसल के तैयार होने पर उसके स्वागत में पर्व मनाये जाते हैं। ऋक्षराज रूस के हिमाच्छादित देश में फसल काटने पर कृषक अपने इष्ट मित्रों को पक्वान्न से परितृप्त करके उत्सव मनाते हैं। भुवन-भास्कर की भूमि जापान में भी जब धानों की फसल कटती है तब धान की सुरा और चावलों की रोटियों के सहभोज होते हैं और गानवाद्यपूर्वक पर्व मनाया जाता है। योरुप के सेन्ट वेलन्टाइन का दिन और इंग्लैण्ड में ‘मे पोल’ (May Pole) के उत्सव भी इसी प्रकार के होते हैं। वस्तुतः इस प्रकार के उत्सव ग्रामीण कृषक जनता में ही प्रचलित हैं।

**मनमोहन कुमार आर्य**

अतः फसल के पक जाने से पूर्व ही नई फसल के स्वागत में होली का पर्व फाल्गुन मास की पूर्णिमा के दिन भारत में मनाया जाता आ रहा है। इस पर्व का नाम होली क्यों है? यह भी हम भूल चुके हैं। आषाढ़ी फसल के नवशस्यों को तिनको की अग्नि में भूना जाता है। ऐसे अधपके शमीधान्य (फली वाले अन्न) को होलक वा होला कहते है। इन अधपके नवागत यवों के द्वारा अग्नि में यज्ञ वा होम करने के कारण इसे **‘होलकोत्सव’** कहते हैं। अग्नि में होलकों की आहुति इस आशय से दी जाती है कि सभी देवताओं को यह नवान्न प्राप्त हो सके। वैदिक साहित्य में अग्नि एक देवता है और यह अन्य सभी देवताओं का मुख हैं। हमें जिन देवताओं को भी अपना कोई प्रिय खाद्य पदार्थ देना व समर्पित करना होता है, उसे अग्नि देवता को यज्ञ द्वारा अर्पित कर देते है। अग्नि में समर्पित पदार्थ अग्निदेवता अन्य सभी जड़-चेतन देवताओं को पहुंचा देते हैं और वह तृप्त हो जाते हैं। इसके बाद नवान्न को समाज के श्रेष्ठ विद्वानों जो सभी लोगों को विद्या व ज्ञान प्रदान करते हैं, क्षमा, त्याग की मूर्ति हैं व गुण, कर्म व स्वभाव के अनुसार ब्राह्मण हैं, उन्हें यह अन्न प्रस्तुत व भेंट किया जाता है। आजकल हमारे कृषक भाई वेद विद्या के शिक्षण केन्द्रों गुरूकुलों आदि में आषाढ़ी की फसल का अन्न पहुंचातें हैं। यह भी होली का ही एक भाग अथवा अंग है। इसके बाद कृषक उत्पादित अन्न का भोग स्वयं व अपने परिवार को करा सकते हैं, यह प्राचीन मर्यादा है जिसमें धर्म के गहन तत्व छिपे हैं। इन होलों की यज्ञ में आहुती के कारण ही इस पर्व का नाम होली प्रचलित हो गया है। कालान्तर में लोगों ने अनेकानेक राजसिक व तामसिक गुणों से प्रभावित आचरण यथा मदिरापान, अनेक अभ्रद आचरण व व्यवहारों को भी इस पर्व के साथ जोड़ दिया है जिन्हें इस पर्व की विकृतियां ही माना जा सकता है। इन अभद्र आचरण व व्यवहारों का त्याग करना व शालीनता पूर्वक पर्व को मनाना ही सभ्यजनों का कर्तव्य है।

होली का पर्व के अवसर पर शिशिर ऋतु का प्रभाव समाप्त हो चुका होता है तथा वसन्त ऋतु पूर्ण यौवन पर होता है। अब सर्दियों में पहने जाने वाले ऊनी गरम वस्त्रों की आवश्यकता समाप्त हो गई है। वसन्त के अनुसार हल्के श्वेत वस्त्रों की आवश्यकता पड़नी है, अतः उनका प्रबन्ध कर उन्हें तैयार करना होता है। जो सर्दियों की ऋतु व्यतीत हो चुकी है वह मनुष्यों सहित हमारे पालतू गाय आदि पशुओं के लिए कठिनतर थी और जो अब विद्यमान है व आने वाली है वह शारीरिक सुखानुभूति की दृष्टि से अच्छी है, अत: इस ऋतु परिवर्तन का भी स्वागत उल्लास व प्रसन्न मन से किया जाता है।

मनुष्य को ईश्वर ने पांच ज्ञानेन्द्रियों व पांच कर्मेन्द्रियों से नवाजा है। आंखे ज्ञान इन्द्रिय हैं जो इच्छे सात्विक दृश्य को देखकर प्रसन्न होती हैं। प्रसन्नता का स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्घ है। प्रसन्न व्यक्ति को रोग व दुख बहुत कम सताते हैं। इसी का प्रतीक वसन्त ऋतु भी है। सभी वृक्ष अपने पुराने पत्तों को छोड़कर नये पत्ते से मानों नया परिधान धारण कर श्रृगांर किये हुए इस पर्व को मनाते हुए प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार से वनों में ओषधियां भी उत्पन्न हो गयी हैं जो रोगियों के लिए दुख निवारण व सुखों की प्राप्ति कराने वाली होती है। इस कार्य में संलग्न व इतर विवेकी पुरूष भी इस उपलब्धि पर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। सभी फूलों के पौधें अपने पूर्व पत्तों को त्याग कर नये रंगीन व मनमोहन पुष्पों व पत्तों से वसन्त ऋतुराज का स्वागत करते हुए दिखते है। ऐसा लगता है कि प्रसन्नता से नाच रहे हैं। पुष्पों की अद्भुत सौन्दर्य व नाना रंगों को देख कर मनुष्य भी मन्त्रमुग्ध व रोमांचित होते है। इन रंग बिरंगे फूलों की ही तरह मनुष्य भी होली के पर्व पर नये-नये रंगों को एक दूसरे के चेहरे पर लगाकर व पुष्प-इत्र को जल में मिलाकर रंगीन जल को एक दूसरे पर डालकर उन्हें रंगीन कर देते हैं जिससे कुछ पलों के लिए प्रसन्नता का अनुभव होता है। यह एक प्रकार होली को सांकेतिक रूप से प्रकट करता है कि फूलों की भांति हमने भी वसन्त ऋतु का स्वागत किया है।

होली के अवसर पर सभी पशु अपनी पुरानी रोमावली को त्याग कर नई रोमावली को नये परिधान के रूप में धारण करते है अथवा प्रकृति व परमात्मा की ओर से उन्हें यह नया परिधान प्राप्त होता है जिससे वह मन ही मन प्रसन्नवदन होकर होली मना रहे होते हैं। पक्षी समूह भी होली के पर्व के अवसर पर अपने पुराने **‘पर व पंखों’** को झाड़कर नवीन पक्षावलि का परिच्छद पहनते हैं। यह भी उन्हें परमात्मा प्रदान करता है। इस प्रकार से न केवल मनुष्य अपितु समस्त पशु, पक्षी तथा वनस्पति जगत सहित समस्त प्राणीजगत होली का पर्व अपनी-अपनी प्रकार से मनातें हैं। होली प्रेम के प्रसार का भी पर्व है। इसे क्रियान्वित रूप देने के लिए इस दिन वैर-भाव को भूलकर लोग एक दूसरे के घर जाकर चेहरे पर रंग लगाकर व गले मिलकर सभी स्त्री व पुरूष एक दूसरे को शुभकामनायें व बधाई देकर इस प्रेम प्रसार को सुदृण व व्यापक रूप देते हैं, यह इस पर्व का विशेष पक्ष है।

इस पर्व से जुड़ी राजा हिरण्यकशपू, उसकी बहन होलिका व पुत्र प्रहलाद् की पौराणिक कथा भी प्रचलित है। कथानुसार राजा हिरण्यकशपू को अभिमान हो गया और उसने ईश्वर की पूजा बन्द करवा दी और अपनी पूजा कराने लगा। उसका अपना ही पुत्र प्रह्लाद उसका विरोधी हो गया जिसे सजा देने के लिए राजा ने अपनी बहिन की सहायता ली। बहिन होलिका को यह वरदान मिला हुआ था कि अग्नि का उस पर कोई प्रभाव नहीं होगा। अतः राजा की आज्ञानुसार वह पुत्र प्रह्लाद को अपनी गोद में लेकर अग्नि पर बैठ गई। परिणाम यह हुआ कि होलिका जल कर नष्ट हो गई परन्तु सच्चे ईश्वर भक्त प्रह्लाद् पर अग्नि का कोई प्रभाव नहीं हुआ। यह कल्पित दृष्टान्त सच्ची ईश्वर की पूजा के महत्व को प्रतिपादित करता है। इस कथा को ही होली का पर्व मनाने में आधारभूत कारण बताया जाता है। विवेक बुद्धि से इसका उद्देश्य यह ज्ञात होता है कि अहंकार से सभी मनुष्यों को बचना चाहिये और सच्ची ईश्वर की पूजा करनी कर्तव्य भाव से यथासमय चाहिये। हमने होली के कई पक्षों पर विचार कर उसके कारणों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। लेख की समाप्ति पर पं. श्री सिद्धगोपाल कविरत्न काव्यतीर्थ जी की निम्न कविता प्रभावपूर्ण कविता प्रस्तुत हैः

ऋतुराज वसन्त विराज रहा, मनभावन है छवि छाज रहा।

बन-बागन में कुसुमावलि की, सुखदा सुषमा वह साज रहा।।

यव गेहुं चना सरसों अलसी, सब ही पक आज अनाज रहा।

यह देख मनोहर दृश्य सभी, अति हर्षित होय समाज रहा।।

उपलक्ष्य इसे करके जग में, शुभ होलक-उत्सव हैं करते।

अधपक्व, यवाहुति दे करके, सब व्योम सुगन्ध से हैं भरते।।

सब सज्जन-वृन्द अतः जग में, नव सस्य-सुयज्ञ इसे कहते।

कुल-वैर विसार स्नेह-सने, हुलसे सब आपस में मिलते।।

चर पान इलायचि भेंट करें, निज मित्र-समादर हैं करते।

हृदयंगम गायन-वादन से, मुद से सब हैं मन को भरते।।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः 09412985121**